www.thearyasamaj.org

वार्षिक शुल्क 50/- रु.
आजीवन 500/- रु.
इस अंक का मूल्य 5/- रुपये

ओ३म्

आर्य प्रेरणा

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

(आर्यसमाज राजेन्द्र नगर का मासिक मुख-पत्र)
दूरभाषः 011-25760006 Website - www.aryasamajrajindernagar.org
वर्ष-6 अंक 12, मास दिसम्बर 2013 विक्रमी संवत् 2070, दयानन्दाब्द 189 सृष्टि संवत् 1960853112
सम्पादक डॉ. कैलाश चन्द्र शास्त्री

स्वामी श्रद्धानंद की जीवन झाँकी

23 दिसम्बर बलिदान दिवस पर विशेष

23 दिसम्बर 2013 को माता के महान सपूत स्वामी श्रद्धानन्द जी का 88वाँ बलिदान दिवस मनाया जायेगा। 88वर्ष पूर्व भारत माँ के लाडले लाल, हिन्दू समाज के प्रबल संगठनकर्ता एवं महान देशभक्त स्वामी श्रद्धानन्द उपाख्य मुंशीराम का शरीर, मुस्लिम हत्यारे अब्दुल रशीद की गोलियों से छलनी होकर 23 दिसम्बर 1926 को सायंकाल भारत माँ की रक्षार्थ बलिदान हो गया। यह अशुभ दिन भारत के काले इतिहास में सदा अंकित रहेगा। कोई भी स्वाभिमानी इस जघन्य अपराध एवं नृशंस हत्या तथा मुस्लिम समाज के षड्यंत्र को कभी भूल न सकेगा।

स्वामी श्रद्धानन्द जी का जन्म ऐसे समय में हुआ था, जब इस देश के लोग एक ओर अंग्रेजी दासता और अंग्रेजों के अत्याचारों से त्रस्त थे, तो दूसरी ओर कट्टरपंथी मुस्लिम संगठनों और ईसाई मिशनरियों द्वारा हिन्दुओं को बलात् मुसलमान और ईसाई बनाया जा रहा था। हमारे हिन्दू समाज के आचार्य और पंडित उस समय यदि कोई हिन्दू भूलकर भी किसी मुसलमान या ईसाई के घर पानी पी लेता था, अथवा उसकी बहन, बेटियों को बलात मुसलमान बना लेते थे, तो वे पुनः उन्हें हिन्दू समाज में वापिस लेने को तैयार नहीं थे। ठीक ऐसे ही समय पंजाब प्रदेश में

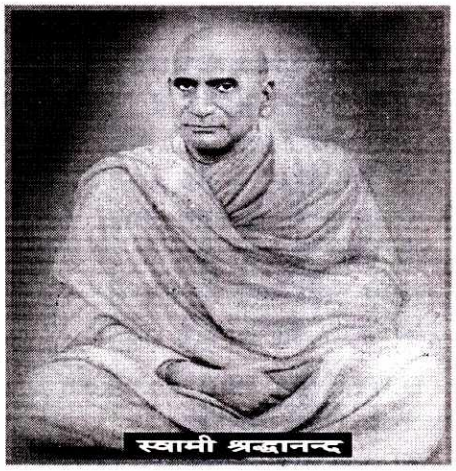

स्वामी श्रद्धानन्द

जालन्धर के तलवन ग्राम में फाल्गुन कृष्ण त्रयोदशी सम्वत् 1913 फरवरी 1856 को लाला नानकचन्द्र जी क्षत्रिय के घर मुंशीराम का जन्म हुआ।

संक्षिप्त जीवन झाँकी

1- सन् 1859 ई. में तीन वर्ष की अवस्था में बरेली नगर की प्राथमिक पाठशाला में शिक्षा प्रारम्भ।

2 - उसी वर्ष अर्थात् सन् 1859 ई. में ही काशी नगरी में उनका यज्ञोपवीत संस्कार हुआ।

3 - सन् 1873 ई. में क्वींस कालेज वाराणसी में प्रवेश लिया।

4 - सन् 1877 ई. में जालन्धर के प्रसिद्ध सोंधी परिवार के लाला शालिग्राम की सुपुत्री शिवदेवी के साथ विवाह।

5 - सन् 1884 ई. में सत्यार्थ प्रकाश के स्वाध्याय के फलस्वरूप आर्यसमाज के सभासद बने।

6 - सन् 1888 ई. में जालन्धर में वकालत आरम्भ की।

7 - सन् 1889 ई. में वैशाखी के दिन सत्धर्म प्रचारक उर्दू साप्ताहिक पत्र आरम्भ किया।

8 - सन् 1890 ई. में लाला देवराज से मिलकर कन्या महाविद्यालय की स्थापना की।

9 - सन् 1891 ई. धर्मपत्नी शिवदेवी का निधन हुआ।

10 - सन् 1892 ई. में आर्य प्रतिनिधि पंजाब के प्रधान चुने गये।

11 - सन् 1900 ई. में गुरुकुल की स्थापना के लिये तीस हजार रुपये एकत्रित करने हेतु घर से निकल पड़े।

12 - 1901 ई. में पुत्री अमृतकला की

'आर्य-प्रेरणा' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

www.thearyasamaj.org

जाति बंधन तोड़कर सुखदेव जी से विवाह कराया।

13 – सन् 1902 ई. में हरिद्वार के निकट काँगड़ी ग्राम गुरुकुल में आरम्भ किया।

14 – सन् 1904 ई. में 'सद्धर्म प्रचारक' साप्ताहिक – पत्र का हिन्दी में प्रकाशन प्रारम्भ किया।

15 – सन् 1909 ई. में 'सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा' के प्रधान चुने गये।

16 – सन् 1911 ई. में कुरुक्षेत्र गुरुकुल की विधिवत स्थापना की।

17 – सन् 1913 ई. में भागलपुर में हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रधान चुने गये।

18 – सन् 1917 ई. में मायापुर वाटिका हरिद्वार में संन्यास आश्रम में प्रवेश करके महात्मा मुंशीराम से स्वामी श्रद्धानन्द बने।

19 – सन् 1919 ई. में 30 मार्च को चाँदनी चौक दिल्ली में गोरों की संगीनों के सामने सीना तानकर खड़े होकर सिंह गर्जना की तथा उसी वर्ष 4 अप्रैल को जामा मस्जिद पर ऐतिहासक भाषण दिया।

20 – दिसम्बर 1919 को कांग्रेस के अमृतसर अधिवेशन के स्वागताध्यक्ष बनाये गये।

21 – सन् 1920 ई. में उन्होंने बर्मा की यात्रा करके आर्य समाज का प्रचार किया तथा उसी वर्ष नागपुर कांग्रेस अधिवेशन में दलितोद्धार के कार्यक्रम प्रस्तुत किये।

22 – सन् 1922 ई. में अकाल तख्त साहिब अमृतसर से भाषण देकर गुरु के बाग के मोर्चा में जेल गये।

23 – सन् 1922 ई. में ही स्वामी श्रद्धानन्द अखिल भारत हिन्दू महासभा के राष्ट्रीय अध्यक्ष निर्वाचित हुए।

24 – सन् 1924 को महात्मा गांधी के आमंत्रण पर बेलगाँव कांग्रेस के अधिवेशन में दर्शक के रूप में भाग लिया।

25 – सन् 1925 ई. में केरल प्रदेश के वायकम में जाति-पाँति, ऊँच-नीच के विरुद्ध सत्याग्रह का नेतृत्व किया।

26 – सन् 1925 ई. में महर्षि दयानन्द जी की जन्म शताब्दी के विशाल कार्यक्रम का नेतृत्व किया।

27 – 23 दिसम्बर 1926 को एक क्रूर मुस्लिम हत्यारे अब्दुल रशीद की गोलियों से वीरगति पाकर रक्तसाक्षी पंडित लेखराम की पंक्ति में सम्मिलित हो गये।

–केशव प्रसाद शुक्ल
(करनैलगंज, गोंडा)

जो होता बलिदान है!

–गोपालसिंह नैपाली

कहने को सम्राट् बड़ा है,
और सुखी धनवान् है,
सबसे बड़ा वही है जग में,
जो होता बलिदान है।

पाकर जन्म यहाँ जो रहता,
दो दिन तिनके जोड़कर,
आज नहीं तो कल चल देगा,
दुनियाँ से मुख मोड़कर।
भेंट चढ़ा दे जो तन-मन की,
सच्चा उसका ज्ञान है,
सबसे बड़ा वही है जग में,
जो होता बलिदान है।।1।।

इस जग में हर चंचल मानव,
अपना ही घर भरता है,
जीता है अपनों की खातिर,
अपनों पर ही मरता है।
जो औरों के लिये उजड़ता,
जग में उसका मान है,
सबसे बड़ा वही है जग में,
जो होता बलिदान है।।2।।

श्रद्धा है वरदान भक्ति का,
सुन्दर त्याग तपस्या है,
अपनी धुन पर मरमिट जाना,
सबसे कठिन समस्या है।
यही समस्या जो हल करले,
उसका ही जय-गान है,
सबसे बड़ा वही है जग में,
जो होता बलिदान है।।3।।

मरने की धुन वह मस्ती है,
जो ताजों को ठोकर दे,
घनी-अँधेरी रातों को भी,
जो झिलमिल पूनम करदे।
नस-नस में है आग लगी,
तो होठों पर मुस्कान है,
सबसे बड़ा वही है जग में,
जो होता बलिदान है।।4।।

जिसको सुख प्यारा है जग में,
वे करते हैं, प्रार्थना,
जो चाहें ऐश्वर्य करें वे,
मन्दिर-मन्दिर अर्चना।
किन्तु शहीदों को मरना ही,
धर्म-भजन है, ध्यान है,
सबसे बड़ा वही है जग में,
जो होता बलिदान है।।5।।

जो चाहे, मैं बनू पुजारी,
वह पूजे भगवान को,
जो चाहे कि बन संन्यासी,
छोड़े सकल जहान को।
जो चाहे, शंकर बन जाऊं,
वह करता विष-पान है,
सबसे बड़ा वही है जग में,
जो होता बलिदान है।।6।।

एक हुए ऋषि दयानन्द जो,
हँसते-हँसते मर गये,
अपना जीवन-दीप बुझा कर,
दिव्य दिवाली कर गये।
उनका प्यार बना स्वतन्त्रता,
का पावन अभियान है,
सबसे बड़ा वही है जग में,
जो होता बलिदान है ।।7।।

दिया भरा प्याला विष का तो,
पगली मीरा पी गई,
मर मिट गये पिलाने वाले,
वह मर कर भी जी गई।
आज उसी के रंग से होती,
भक्तों की पहचान है,
सबसे बड़ा वही है जग में,
जो होता बलिदान है।।8।।

पुण्य सताया जाये जगत में,
पाप सताता जायेगा,
पर बलिदान सदा दुनियाँ को,
राह बताता जायेगा।
यहाँ शहीद समय का ज्ञानी,
पापी जग नादान है,
सबसे बड़ा वही है जग में,
जो होता बलिदान है।।9।।

www.thearyasamaj.org

ओ३म्

सुखी दाम्पत्य-जीवन की परिकल्पना

– डॉ. कैलाश चन्द्र शास्त्री

सन्तुष्टो भार्यया भर्ता भत्रा भार्या तथैव च।
यस्मिन्नेव कुले नित्यं कल्याणं तत्र वै ध्रुवम्।।
(मनु. 3.60)

अर्थात् जिस कुल में पत्नी से पति तथा पति से पत्नी सन्तुष्ट रहती है, उस कुल में अवश्य ही सर्वदा कल्याण होता है। मनु ने अन्यत्र भी कहा है-

यदा भर्ता च भार्या च परस्परवशानुगौ
तदा धर्मार्थकामानां त्रयाणामपि संगतम्।।

अर्थात्- जब पति और पत्नी परस्पर वशीभूत होकर एक दूसरे के अनुगाम होते हैं, तब उस घर में धर्म, अर्थ, और काम एकत्रित हो जाते हैं।

आजकल लोग विवाह का तात्पर्य बारात, दावत, गाना-बजाना आदि ही समझते हैं। यदि ये वस्तुएँ विवाह के अवसर पर न की जाएँ, तो लोग समझते हैं कि विवाह हुआ ही नहीं। पर सच्चाई यह नहीं है। ये वस्तुएँ तो केवल विवाह का बाह्य ढांचा मात्र हैं।

वैदिक धर्म में विवाह का प्रथम उद्देश्य धर्म पालन है। द्वितीय उद्देश्य सन्तानोत्पत्ति है एवं तीसरा उद्देश्य रति (आनन्द) है।

गृहस्थाश्रम रूपी रथ के पति और पत्नी दो पहिए हैं। जब दोनों पहिए एक साथ प्रेम और सहयोग के साथ मिलकर कार्य करेंगे, तभी जीवन का रथ सुचारू रूप से चल सकता है अन्यथा नहीं। पति और पत्नी गार्हस्थ्य जीवन के कामों में मिलकर हाथ बटाएं अर्थात् उनमें सहयोग की भावना हो, तो जीवन में एक माधुर्य और सुचारुता आ जाती है। विवाह एक सामाजिक कर्तव्य भी है- इसका मूल उद्देश्य धर्म-पालन, पारिवारिक स्थिरता एवं सन्तानोत्पत्ति द्वारा समाज को सतत् रूप में बनाए रखना है। क्योंकि प्रत्येक समाज का जीवित रहना उस समाज के परिवारों पर आधारित है। उत्तम राष्ट्र की परिकल्पना भी आदर्श परिवारों पर आश्रित है।

विवाह से पूर्व वर-वधू के चुनाव के समय या विवाह निश्चित करते समय निम्नलिखित महत्त्वपूर्ण बातों की ओर ध्यान दिया जाना चाहिए-

1. अनमेल विवाह-

अनमेल विवाह उस विवाह को कहते हैं जिसमें पति और पत्नी का मेल न खाएं। यह कई क्षेत्रों में देखा जा सकता है। उदाहरण-स्वरूप पहले इसे शिक्षा के क्षेत्र में ही देखा जा सकता है। पति-पत्नी में से एक उच्च शिक्षा प्राप्त हो और दूसरा बिल्कुल गंवार हो। इस से गाड़ी पटरी पर नहीं बैठगी। अनपढ़ व्यक्ति में हीन भावना प्रवेश कर जाएगी उच्चशिक्षा प्राप्त व्यक्ति में अहम् का अधिक बोल-बाला हो जाएगा अतः सम्बन्ध बनाते समय युवक-युवति के शिक्षा-स्तर की समानता को भी ध्यान में रखना चाहिए। अनमेल विवाह की सबसे गम्भीर समस्या आयु के सम्बन्ध में है। कई बार धन के लोभ में, दहेज के भय से या किसी कारण से कम आयु की लड़की का विवाह अधिक आयु के पुरुष से कर दिया जाता है। ऐसी स्थिति में परिणाम भयंकर निकलते हैं। अतः बिना किसी लोभ के वर वधू के सम्बन्ध के समय उनकी आयु के अन्तर को किसी भी दृष्टि से ओझल नहीं करना चाहिए।

दहेज प्रथा के कारण भी भारत में अनेक अनमेल विवाह हो जाते हैं। हिन्दु-समाज में वर-कन्या की योग्यता का कोई ध्यान ही नहीं रखा जाता। परिणाम स्वरूप अनुपयुक्त विवाह हो जाते है और इसका मूल कारण है- दहेज। इस दूषित प्रथा के कारण ही हिन्दू समाज विखण्डित हो गया। पहले ऐसी आशा थी कि शिक्षा की वृद्धि के साथ-साथ यह प्रथा समाप्त हो जायगी, पर हुआ इसका उल्टा ही। अच्छे शिक्षित और अच्छी सेवाओं में नियुक्त व्यक्तियों ने इस प्रथा को और अधिक प्रोत्साहन दिया है। अन्तर्जातीय विवाह तथा सामाजिक चेतना द्वारा ही इस प्रथा का नाश हो सकता है।

विरोधी स्वभाव-

जब पति-पत्नी का स्वभाव एक दूसरे का विरोधी होता है समाञ्जस्य स्थापित करना कठिन हो जाता है। मान लीजिए पति को धीरे बोलने की आदत है तथा वह उसे सभ्यता का लक्षण समझता है, पर उसकी पत्नी इसे निर्बलता का प्रतीक समझती है और स्वयं जोर-जोर से बोलती है, तो ऐसी स्थिति में पति-पत्नी में समझौता होना कठिन है अतः विवाह पूर्व यह ध्यान देना चाहिए कि युवक-युवति बिल्कुल ही उलट स्वभाव वाले न हों।

जीवन दर्शन-

जब पति-पत्नी के जीवन-दर्शन एक दूसरे से भिन्न होते हैं, तो पारिवारिक तनाव अनिवार्य है। मान लो, पति का जीवन दर्शन है- खाओ, पीओ और मौज उड़ाओ, चाहे इसके लिए कुछ भी करना पड़े। इसके विपरीत यदि पत्नी का जीवन दर्शन धार्मिक सिद्धान्तों पर आधारित है और वह कोई भी पाप करना नहीं चाहती। ऐसी स्थिति में तनाव होगा ही। धार्मिक भेद इस प्रकार के जीवन दर्शन में भेद उत्पन्न कर देता है। विवाह-सम्बन्ध स्थिर करते समय इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए।

रोगी व्यक्तित्व -

विवाह सम्बन्ध स्थिर करते समय युवक-युवति के असाध्य मानसिक व शारीरिक रोगों का भी ध्यान रखना चाहिए। एक के सदा रोगी रहने से भी दूसरे के मन में तनाव उत्पन्न हो जाता है।

रुचियों की समानता -

पति-पत्नी का धार्मिक, शैक्षिक, मनोरंजनात्मक और आर्थिक विषयों पर समान रुचिवाला होना भी आवश्यक है। यदि पति सादा जीवन व्यतीत करने की रुचिवाला हो और पत्नी आधुनिक फैशन करने की ज्यादा रूचि रखती हो, सामञ्जस्य नहीं रहेगा।

सांस्कृतिक पृष्ठभूमि -

यदि लड़की ऐसे परिवार से आई हो जिसने हमेशा शालीनता देखी हो पर दूसरी ओर पति यदि इसके विपरीत वातावरण में पला हो, अकड़पन व झूठी शान उसके जीवन का अंग हो तो ऐसी स्थिति में दाम्पत्य-जीवन नीरस हो जायेगा। अतः रिश्ता करते समय सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पर भी ध्यान रखना चाहिए।

व्यावसायिक जीवन -

कई लड़कियाँ स्वतन्त्ररूप से विवाह के पश्चात् भी सर्विस करना या अपनी सर्विस कायम रखना चाहती हैं पर लड़के वाले इस बात को पसन्द नहीं करते अथवा कई बार लड़कियाँ नौकरी वाले लड़कों वा व्यापार वाले लड़कों को पसन्द करती हैं। इसलिए इन सब बातों पर भी विवाह से पूर्व ही निर्णय कर लेना चाहिए, ताकि बाद में होने वाले मानसिक तनाव से बचा जा सके।

गुण और रूप की भिन्नता -

योग्य गुणवती तथा रूपवती कन्या का विवाह सुन्दर और गुणवान् युवक से ही करना चाहिए, नहीं तो कन्या हीन भावना की शिकार हो जायेगी। ऐसे ही लड़कों के विषय में ध्यान रखना चाहिए।

यदि इन बातों को ध्यान में रखा जाए तो विवाह के उपरान्त वर-वधू में टकराव की स्थिति नहीं आएगी और परिवार में सुख शान्ति का वातावरण रहेगा।

www.thearyasamaj.org

ओ३म्

ऋषि वाणी

- आचार्य भद्रसेन

-ईश्वर-सिद्धि-

विश्व की विचित्र रचना ही उस विश्व-रचयिता को सिद्ध कर रही है-

देखो शरीर में (प्रभु ने) कैसी ज्ञान पूर्वक रचना की है, कि जिसको विद्वान् लोग भी देखकर आश्चर्य मानते हैं। भीतर हड्डियों का जोड़, नाड़ियों का बन्धन, मांस का लेपन, चमड़ी का ढक्कन। प्लीहा, यकृत, फेफड़ा-पंखा कला का स्थापन, जीव का (हृदय में) संयोजन, शिरोरूप मूल की रचना, लोम नखादि का स्थापन, आंखों की अतीव सूक्ष्म शिराओं का तारवत् ग्रन्थन, इन्द्रियों के (पृथक् 2) भागों का प्रकाशन, जीवन के जागृत, स्वप्न, सुपुप्ति अवस्था के भोगने के लिए स्थान विशेषों का निर्माण, सब धातुओं का विभाग करना, कला, कौशल स्थापनादि अद्‌भुत सृष्टि को बिना परमेश्वर के कौन बना सकता है।

नाना प्रकार के रत्नों, धातुओं से जड़ित मुक्ति (मोती) विविध प्रकार के वट वृक्षादि के बीजों में अति सूक्ष्म रचना, असंख्य हरित, श्वेत, पीत, कृष्ण आदि अनेक विचित्र (रंग-बिरंगे) रूपों से युक्त पत्र, पुष्प, फल, अन्न, कन्द, मूलादि की रचना, अनेकानेक कोटि भूगोल, सूर्य, चन्द्र आदि लोकों का निर्माण, धारण, भ्रमण आदि नियमों में रखना आदि। (विचित्र कार्य) परमेश्वर के बिना कोई भी नहीं कर सकता। (स.प्र. 8 समु.)

हम कैसे प्रभु की उपासना करें

(ईश्वर का स्वरूप)

जिसके गुण, कर्म स्वभाव और स्वरूप सब सत्य ही हैं। जो केवल चेतन मात्र वस्तु है। तथा जो अद्वितीय, सर्वशक्तिमान्, निराकार, सर्वत्र व्यापक, अनादि और अनन्त आदि सत्यगुणों वाला है और जिसका स्वभाव अविनाशी, ज्ञानी, आनन्दी, शुद्ध, न्यायकारी, दयालु और अजन्मा आदि है। जिसका कर्म जगत की उत्पत्ति और विनाश करना, तथा सर्व जीवों को पाप पुण्यों के फल ठीक ठीक पहुंचाना है। उसे ईश्वर कहते हैं।

(आर्योद्देश्य रत्नमाला)

हे मनुष्यो! जिस प्रभु के बिना न विद्या और न ही सुख की प्राप्ति हो सकती है। जो प्रभु विद्वानों का संग, योगाभ्यास और धर्माचरण के द्वारा प्राप्त होता है। उसी जगदीश्वर की सदा उपासना किया करो।

(ऋ.भा. 7.11.1)

सब लोगों को चाहिये कि सत्-चित्-आनन्द स्वरूप, नित्य ज्ञानी, नित्यमुक्त, अजन्मा, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, व्यापक, कृपालु, सब जगत के जनक और धारणा करने हारे परमात्मा की ही सदा उपासना करें कि जिससे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष जो मनुष्य देह रूप वृक्ष के चार फल हैं वे उसकी भक्ति और कृपा से सर्वदा सब मनुष्यों को प्राप्त होते हैं।

(प.म.य.वि)

हे मनुष्यो! जो सब समर्थो में समर्थ, सच्चिदानन्द स्वरूप, नित्यशुद्ध, नित्यबुद्ध, नित्यमुक्त स्वभाव वाला, कृपा सागर, ठीक-ठीक न्याय का करने वाला, जन्म मरण आदि क्लेश रहित, निराकार, सबके घट-घट का जानने हारा, सबका धर्ता, पिता, उत्पादक, अन्नादि से विश्व का पालन पोषण करने हारा, सकल ऐश्वर्य युक्त, जगत् का निर्माता, शुद्ध स्वरूप, और जो प्राप्ति की कामना करने योग्य है। उस परमात्मा का जो शुद्ध चेतन स्वरूप है उसी को हम धारण करें। जिससे कि वह परमेश्वर जो हमारे आत्मा और बुद्धियों का अन्तर्यामी स्वरूप है, हमको दुष्टाचार अधर्मयुक्त मार्ग से हटा के श्रेष्ठाचार और सत्य मार्ग में चलावे। उस प्रभु को छोड़कर हम और किसी का ध्यान न करें, क्योंकि न कोई उसके तुल्य और न अधिक है। वही हमारा पिता, राजा, न्यायाधीश, और सब सुखों का देने हारा है।

(स.प्र. 3 समु.)

मनुष्य लोग जो सबका उत्पन्न करने वाला, पिता के तुल्य रक्षक, सूर्यादि प्रकाशों का भी प्रकाशक, सर्वत्र अभिव्याप्त जगदीश्वर है। उसी पूर्ण परमात्मा की सदैव उपासना किया करें। (य.भाष्य 37-14)

ईश्वर सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है। (आ. नियम-2)

हे मनुष्यो! जो जगदीश्वर सारे संसार में व्यापक होकर सबको धारण करके, रक्षा करता हुआ अन्तर्यामी रूप से सर्वत्र व्याप्त हो रहा है। जिसकी कृपा से विज्ञान, दीर्घायु तथा विजय प्राप्त होता है। तुम उसका ही निरन्तर भजन करो।

(ऋ.भा. 4-58-11)

प्रभु-भक्ति

1. प्रभु भक्ति का प्रकार

न्यून-से-न्यून एक घण्टा तक परमेश्वर का ध्यान अवश्य करें। जैसे योगी लोग समाधिस्थ होकर परमात्मा का ध्यान करते हैं, वैसे ही सन्ध्योपासना भी किया करे।

(स.प्र. 3 समु.)

2. सन्ध्योपासना कैसे करें-

भक्त जब प्रार्थना करना चाहे, तब एकान्त शुद्ध देश में जाकर, आसन लगा, प्राणायाम कर और बाह्य विषयों मे इन्द्रियों को रोक, मन को नाभि प्रदेश में, वा हृदय, कण्ठ, नेत्र (भ्रूमध्य) शिखा (ब्रह्मरन्ध्र) अथवा पीठ की मध्य अस्थि (सुषुम्ना नाड़ी) में से किसी स्थान पर स्थिर कर अपने आत्मा और परमात्मा का विवेचन करके परमात्मा में मग्न हो जाए।

(स.प्र. 7 समु.)

3. सच्चा नाम स्मरण, या भक्ति का स्वरूप :

प्रभु के ब्रह्मा, विष्णु, महादेव, ईश्वर आदि नामों के अर्थो को अपने (जीवन) में धारण करें। अर्थात् बड़े कामों से बड़ा बने, समर्थो में समर्थ हो, (अपने) सामर्थ्यो को बढ़ाता जाए। अधर्म कभी न करे। सब पर दया रखे। सब प्रकार के साधनों से समर्थ बने, शिल्प विद्या से नाना प्रकार के पदार्थो का निर्माण करे, संसार में अपने आत्मा के तुल्य सुख दुःख समझे, सब की रक्षा करे। इस प्रकार परमेश्वर के नामों का अर्थ विचार कर परमेश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव के अनुकूल अपने गुण, कर्म स्वभाव को बनाते जाना ही परमेश्वर का (सच्चा) नाम स्मरण है।

(स.प्र. 11 समु.)

4. उपासना की विधि -

जब-जब मनुश्य ईश्वर की उपासना करना चाहें, तब-तब अपने अनुकूल एकान्त स्थान में, बैठकर, अपने मन को शुद्ध और आत्मा को स्थिर (एकाग्र) करें, तथा सब इन्द्रिय और मन को सच्चिदानन्द, अर्न्तयामी, सर्वव्यापक, और न्यायकारी परमात्मा में भली प्रकार लगाकर, सम्यक् चिन्तन करके उसी में अपने आत्मा को नियुक्त अर्थात लीन कर दें।

(ऋ.भा.भू.)

5. ईश्वर-साक्षात्कारोपाय :

मनुष्या आलस्यं विहाय, पूर्वैराप्तै राचरितानि कर्माणि कृत्वा, देवानां देवं सर्वाधारं सत्यस्वरूपं, दीपेन घटादिकमिवाऽन्तर्व्याप्तं परमात्मानं साक्षात्कृत्य, अन्यान् प्रत्युपदिशन्तु।

भाषार्थ : - सब मनुष्य आलस्य छोड़ पूर्व के ऋषि मुनियों द्वारा किए कर्मो को

www.thearyasamaj.org

करके, देवों के देव, सर्वाधार, सत्यस्वरूप, अन्तर्यामी परमात्मा को दीपक से घटादि के समान साक्षात् करके अन्यों को उपदेश प्रदान करें। (यजु. भा. 3.55)

6 ईश्वर–साक्षात्कार–

जैसे यज्ञ करने वाले ऋषि लोग यज्ञाग्नि को अपने सम्मुख स्थापित करके और उसमें आहुति देकर जगत का उपकार करते हैं उसी प्रकार अपने आत्मा के सम्मुख परमात्मा को देखकर उस परमात्मा अग्नि में अपने मन आदि इन्द्रियों का हवन करके जो प्रभु का साक्षात् कर लेते हैं, वे ही (परमात्मा–भक्त) प्रभु के उपदेश से जगत् का उपकार कर सकते हैं। (ऋ.भा. 6.10.1)

7. भगवान् के रचे अद्‌भुत पदार्थ ही भगवान की महान् मूर्तियां है–

यदि मूर्ति के दर्शन से ही परमेश्वर का स्मरण होता है तो परमेश्वर के बनाए पृथिवी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पति आदि अनेक पदार्थ जिसमें ईश्वर ने अद्‌भुत रचना की है। क्या ऐसी (अद्‌भुत) रचना युक्त पृथिवी, पहाड़ आदि परमेश्वर रचित मूर्तियां, कि जिन पहाड़ आदि से मनुष्यकृत मूर्तियां बनती हैं, उनको देख कर परमेश्वर का स्मरण नहीं हो सकता।

(स.प्र. 11 समु.)

8. परमात्म–पद–प्राप्ति :

हे विद्वानो! और मुमुक्षु लोगो! विष्णु का जो परम, अत्यन्तोत्कृष्ट पद, सबके जानने योग्य, जिसको प्राप्त होके (भक्तजन) सदा पूर्णानन्द में रहते हैं, फिर वहां से शीघ्र दुःख सागर में नहीं गिरते। उस विष्णु के परमपद को धर्मात्मा, जितेन्द्रिय, सबके हित कारक विद्वान् लोग ही यथावात् अच्छे विचार से देखते हैं। जैसे सूर्य का प्रकाश सब और व्याप्त है, वैसे ही परब्रह्म परमात्मा सब जगत् में परिपूर्ण एक रस भर रहा है। वही परम पद स्वरूप परमात्मा प्राप्त करने योग्य है। उसी को प्राप्त कर जीव सब दुःखों से छूटता है। अन्यथा जीव को कभी परम सुख नहीं मिलता। इसलिए हमको उस परमेश्वर की प्राप्ति में सब प्रकार से सदा प्रयत्न करना चाहिये।

9. हम उस प्रभु को अपना सखा कैसे बनावें :

हे मनुष्यो! जो जड़ तथा चेतन जगत् का अधिष्ठाता और पालक है। आओ मित्रो! भाई लोगो! हम सब मिल के उस परमानन्द, सब बलों के स्वामी इन्द्र परमात्मा को (अपना) सखा बनाने के लिए अत्यन्त प्रेम से गद् गद् होके बुलावें। वह प्रभु शीघ्र ही कृपा करके हमसे सखित्व (मित्रता) करेगा, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं।

10. जो लोग परमात्मा को नहीं जानते उन्हें धिक्कार है:

जो लोग परमात्मा को नहीं जानते और उसकी आज्ञा के अनुकूल आचरण नहीं करते, उन्हें बार बार धिक्कार है। और जो उसकी उपासना करते हैं वे धन्य हैं।

11. परमात्म प्रेमी की पहिचान :

सच्चा प्रभु का प्रेमी किसी से घृणा नहीं करता, वह ऊंच नीच भेद भावना को त्याग देता है। वह उतने ही पुरुषार्थ से दूसरों के दुःख निवारण करता है, कष्ट और क्लेश हरता है, जितने पुरुषार्थ से वह अपने कार्य करता है, ऐसे ज्ञानी जन ही वास्तव में आत्म प्रेमी कहलाते हैं।

– साभार –प्रभु भक्त दयानन्द

सूचना

आर्य समाज राजेन्द्र नगर के सभी सदस्यों को सूचित किया जाता है कि मनमोहन नन्दा जी की धर्मपत्नी श्रीमती तृप्ता नन्दा जी श्री का देहान्त 5.8. 2013 को न्यूटन, मेसेच्युसैट्स में हो गया। श्रद्धांजलि सभा 24 दिसम्बर 2013 को सायं 2 से 4 बजे आर्यसमाज राजेन्द्र नगर में होगी।

–मन्त्री

उत्तम स्वभाव

शान्ति

उत्तम स्वभाव का प्रथम भूषण है शान्ति। अपने जीवनों में शान्ति की स्थापना करके शान्त प्रशान्त शान्तात्मा बनिये।

शान्ति और अशान्ति का सम्बन्ध न सम्पन्नता से है ने असम्पन्नता से, न प्रतिष्ठा से है न अप्रतिष्ठा से, न मान से है न अपमान से, न स्थान से है न धाम से, न पद से है न परिवार से। शान्ति न द्यौ में है, न अन्तरिक्ष में है, न पृथिवी पर।

एक बार एक राजकुमार विश्व–भ्रमण के लिये निकला। उसके प्रत्येक मित्र ने उससे एक न एक पदार्थ लाने को कहा। किसी ने कहा "मेरे लिये अमेरिका से अमुक वस्तु लाना"। मित्र निर्मल ने कहा "मेरे लिये कहीं से थोड़ी सी शान्ति लाना"।

राजकुमार जहां भी गया, वहीं उसने शान्ति की तलाश की, किन्तु किसी भी मूल्य पर उसे कहीं शान्ति उपलब्ध न हो सकी। अनायास राजकुमार की भेंट एक शान्तात्मा से हुई। "क्या आप मुझे मेरे एक मित्र के लिये थोड़ी सी शान्ति दे सकते हैं?" "अवश्य, अवश्य। मैं आपके मित्र के लिये थोड़ी सी नहीं, अनन्त शान्ति दूंगा," इतना कहकर शान्तात्मा ने एक कागज पर कुछ लिखा और उस कागज को एक लिफाफे में बन्द करके लिफाफा राजकुमार को दे दिया। राजकुमार ने देखा कि लिफाफा मजबूती के साथ चिपका हुआ था और उसके ऊपर लिखा हुआ था "अनन्त शान्ति"।

अपनी राजधानी में पहुंचकर राजकुमार ने मित्र निर्मल को बुलाया और उसे वह लिफाफा भेंट किया, जिसके ऊपर लिखा हुआ था "अनन्त शान्ति"। निर्मल ने आश्चर्य और उत्सुकता के साथ उसे खोला, उसके अन्दर से उस कागज को निकाला और उसे पढ़ा। उसे पढ़ते ही निर्मल अनन्त शान्ति से युक्त हो गया और वह अनन्त शान्ति के साथ बोला, "धन्यवाद, राजकुमार! आपके अनुग्रह से मुझे अनन्त शान्ति प्राप्त हो गयी"। राजकुमार नू पूछा, "इतने छोटे से लिफाफे में अनन्त शान्ति कैसे समा गयी"? निर्मल ने अपनी मुस्कान में अनन्त शान्ति की छटा छटकाते हुये कहा, "राजकुमार, शान्ति न लिफाफे में है, न कागज पर है। वह तो एक वाक्य में निहित है, जो इस कागज पर लिखा है"। "मैं तो देखूं", यह कहकर राजकुमार ने वह कागज उठाया और उसे पढ़ा। उस पर लिखा हुआ था, "शान्ति का निवास विवेक में है"। राजकुमार ने नेत्र बन्द करके कुछ क्षण विचार किया और उसे भी अनन्त शान्ति प्राप्त हो गयी। जिसने भी इस वाक्य को पढ़ा और समझा, उसी को अनन्त शान्ति मिली। जो भी इस वाक्य को पढ़ेगा और समझेगा, उसे निश्चय ही अनन्त शान्ति की उपलब्धि होगी।

– स्वामी विद्यानन्द विदेह

www.thearyasamaj.org

पुण्य तिथि 5 दिसम्बर

हमारे पथ प्रदर्शक

स्व. द्वारकानाथ जी सहगल

"कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" एवं "वसुधैव कुटुम्बकम्" के शान्ति दूत, "परोपकराय सतां विभूतयः" इस नीति वाक्य के अक्षरशः पालक, तपःपूतः, सौम्यमूर्ति, वैदिक धर्म के निष्ठावान भक्त, कल्याण मार्ग के पथिक, आर्य जगत के आधार स्तम्भ श्री द्वारकानाथ सहगल जी का जन्म पेशावर, फ्रन्टियर में 7.9.1911 में श्री मथुरा दास सहगल जी के यहाँ हुआ।

श्री द्वारकानाथ जी सहगल को वैदिक संस्कार पारिवारिक परम्परा से प्राप्त हुए थे। बाल्यकाल में ही आर्यसमाज की गतिविधियों से आप सक्रिय रूप से जुड़ गये थे। भारत विभाजन के पश्चात् 1948 में दिल्ली आकर आर्यसमाज के कार्यों में आजीवन तन, मन, धन से समर्पित रहे। आर्यसमाज राजेन्द्र नगर का वर्तमान विराट् स्वरूप आपके पुरुषार्थ का जीवन्तरूप है। पारिवारिक जिम्मेदारियों के साथ-साथ आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार और उन्नति के लिए आप आजीवन संघर्षरत रहे। आपकी छत्रछाया में आर्यसमाज राजेन्द्रनगर तथा भारतीय शुद्धि सभा पुष्पित-पल्लवित होते रहे हैं। अपने जीवन में व्यक्तिगत हानि-लाभ से बहुत ऊपर उठकर आपने अपना सारा जीवन समाज और शुद्धि सभा के लिए समर्पित किया हुआ था। समाज के कार्यों को आप बड़ी योग्यता से संपादित करते थे। आप वैदिक सिद्धान्तों के मर्मज्ञ होने के साथ-साथ हर प्रकार की सामाजिक गतिविधियों के संचालन में पूर्णतया सक्षम तथा देशभक्ति की भावना से ओत-प्रोत सहृदय-हृदय महामानव थे। आप पवित्र सात्विक जीवन के प्रबल समर्थक थे, उसी तरह जैसे पंक में पंकज होता है, पंक की समस्त कलुषिता से दूर मोहक, आकर्षक और स्वच्छ। आपने परिवार तथा समाज को सदा एक ही दृष्टि से देखा। आपका प्रभाव सारे परिवार पर दृष्टिगोचर होता है। आपके सभी पारिवारिक जन आज भी सक्रिय रूप से न केवल आर्यसमाज से जुड़े हैं बल्कि बहुत अच्छे ढंग से आपकी पारिवारिक तथा सामाजिक श्री वृद्धि कर रहे हैं। ज्येष्ठ पुत्र स्व. सुरेन्द्र जी एवं स्व. सुभाष जी तो रत्न थे, कनिष्ठ पुत्र श्री अशोक सहगल जी आर्य समाज के गौरव हैं। पूत्रीयां श्रीमती उमा बजाज जी, श्रीमती गुलशन मल्होत्रा जी, श्रीमती सुषमा भसीन जी एवं श्रीमती सुरीला खत्री जी सभी प्रभु कृपा से प्रसन्न एवं सम्पन्न हैं। आप आर्यसमाज तथा भारतीय शुद्धि सभा के वर्षों तक प्रधान, मन्त्री, केन्द्रीय सभा के उपप्रधान तथा आर्ययुवक परिषद् के भी प्रधान थे। भारतीय शुद्धि सभा के कार्य को आपने जिस कर्त्तव्यनिष्ठा से सम्पन्न किया वह इस दिशा में कार्य करने वाले सभी आर्यजनों के लिए सदैव प्रेरणास्रोत रहेगा। हम आपकी पावन स्मृति को श्रद्धापूर्वक नमन करते हैं।

पुण्य तिथि 6 जनवरी

हमारे प्रेरणा स्तम्भ

स्व. श्री रामनारायण मैहता

स्व श्री रामनारायण जी मैहता का जन्म सन् 1904 में अविभाजित पंजाब में हुआ था। इनके पिता स्व. किशन चन्द जी मैहता जिला रोपड़ के तहसिलदार थे। स्व. रामनारायण जी अत्यन्त कुशाग्र बुद्धि के थे अतः पढ़ाई में सदैव प्रथम स्थान प्राप्त करते थे। 1931 में बी.ए. (राजनीति शास्त्र) की परीक्षा में पटियाला यूनिवर्सिटी में सर्व प्रथम स्थान प्राप्त कर आपने अपना एवं परिवार का नाम रोशन किया। परिवार के लिए अपनी उच्चशिक्षा छोड़ दी एवं नौकरी की। प्रसिद्ध चिकित्सक (भारतीय सेना) डॉ. शिवराम बोहरा जी की सुपुत्री शकुन्तला देवी जी के साथ आपका विवाह हुआ।

आपने सी.पी.डब्ल्यू.डी. में एकाउण्टेट के रूप में तथा भारत सेवक समाज में अडिटर के रूप में कार्य किया। श्री रामनारायण जी कर्मठ, उत्साही एवं लगनशील व्यक्ति थे। इनका एक गुण जिससे हम सभी प्रेरणा ले सकते हैं वह है- कर्मशीलता या कर्मयोग। इन्होंने सेवानिवृत्ति के पश्चात् चार्टर्ड एकाउन्टेन्सी की परीक्षा तथा होम्योपेथिक का ग्रेजुएशन कोर्स किया एवं आर.एच.एम.पी. से प्रमाणपत्र लिया।

आर्यसमाज राजेन्द्र नगर में होम्योपेथीचिकित्सा कार्य के माध्यम से आपने बहुत सेवा की। आर्य महिला आश्रम में श्रीमती सावित्री मरवाह होम्योपेथीचैरिटिबल ट्रस्ट को प्रारम्भ भी आपने करवाया। प्रतिदिन की भाँति जीवन के अन्तिम दिन भी आपने प्राणायाम किया, स्वाधयाय किया एवं प्रभु भक्ति के भजन गाकर 6 जनवरी 1990 को 86 वर्ष की आयु में चरैवेति का जीवन जीते हुए आपने अपना नश्वर शरीर त्याग कर दिया। आपकी तीनों पुत्रियाँ- श्रीमती कमला देवी, श्रीमती सुदर्शन हाण्डा, श्रीमती सुशीला मल्होत्रा तथा तीन पुत्र स्व. श्री भारत चन्द्र मैहता, स्व. श्री हरिश्चन्द्र मैहता एवं श्री सतीश चन्द्र मैहता जी एवं श्रीमती परवीन मैहता जी का परिवार प्रभु कृपा से सम्पन्न हैं एवं प्रसन्न हैं। सौभाग्य की बात है कि कनिष्ठ पुत्र श्री सतीश चन्द्र मैहता आर्य समाज राजेन्द्र नगर के मन्त्री के रूप में सेवा कार्य कर रहे हैं। आपके पोते अंकुर मैहता एवं श्रीमती रचिता मैहता, अनुज मैहता एवं श्रीमती पूनम मैहता, विकास मैहता एवं श्रीमती मानसी मैहता आर्य समाज से सक्रिय रूप से जुड़े हुए हैं।

www.thearyasamaj.org

- गतांक से आगे

THE VEDIC LIGHT

INTERPRETATION OF THE VEDAS

(Swami Vidyanand Sarswati ji)

In their writings on the Vedas all Europeon scholars followed Sayana, especially where his interpretations seemed to be derogatory to Vedic teachings. They considered the great Indian sages-Panini and Yaska-far inferior to their own countrymen who had attained some smattering in Sanskrit. In fact they did not have the ability to understand them.

Race Prejudice – Circumstances have changed and researchers have revolutionised methods of Vedic interpretation, but even our own scholars, nourished and trained in the Western school of thought still persist in the wrong and damaging view about India's heritage, the Vedas; for, "they may change his skin and the leopard his spots" but the otherwise chamelionlike Europeans must stick to these as they politically suit them. In other words, it is race prejudice, pure and simple, that has prevailed upon them to persist in their views about India. There was a time when these views could be excused as the tentative opinions of ignorant people, called nesearchist. But those daysare now past. Panini's Ashtadhyayee and Yaska's Nirukta with their commentaries have since heen Wearthed. The commentaries on the Vedas by Swami Dayanand and some other Indian scholiasts like Shri Aurobindo and others, are also available. Many other auxiliary treatises, ancient and modern, have also come to light. In the face of all these to persist in the old orthodox methods of interpreting the Vedas does not become a scholar.

These European scholars, when they set down to write about India, felt themselves to be judges sent down from some region far away from and high above the world of humanity, and the Vedas and the country of the Vedas to be criminals, whose case they had to judge. They never approached the temple of the Vedas in an attitude of reverence and awe, but with the feelings of a police officer who sees crime everywhere. Hence, as they willed so they saw.

Dayananda took upon himself the stupendous task of the commentary of the Vedas, quite independent from the traditional commentaries of Sayana and the like. The interpretation of the Vedas, belong to three major categories : (1) the historical or the natural cosmologic history, (2) the ritualistic, i.e., pertaining to Yajnas, and (3) the spiritual or the mystic with deeper inner meanings. The doyen of Vedic commentators, Sayana, or, as a matter of fact, any other scholiast of that period, could not have been inspired with their realism of purposefulness of human life. Therefore his interpretation, howsoever masterly, fell short of natural expectations. Sayana was always obsessed by the ritualistic formula and, therefore, sought continually to force the sense of the Vedas into that narrow mould. He could not sufficiently, go beyond the current interpretations. It is the ritualistic interpretation that is the persistent note in which all others loose themselves. For Sayana the hymns of the Vedas were fundamentally and principally concerned with the Karmakanda. He always laboured in the light of this idea.

Himself a great Sanskrit scholar, Dayanand handled his material with special care. Especially creative was his ingenuity. He took as basis a free use of the old Indian philology. It was a remarkable attempt at re-establishing the Vedas as a forceful living scripture.

Every great interpreter of the Vedic texts has taken from yask, the great lexicongrapher and etymologist, and from Panini's Ashtadhyayee, as well as Patanjali's Mahabhashya. The great sage Yaska compiled one of the oldest lexicons of the Vedic terms, known as the Nighantu and his own commentary thereon, called Nirukta. But no academic knowledge of our rigorous scholarly disciplines can be a substitute of inspiration and personal experiences of a highly elevated soul. We have been fortunate in this respect that sages of the eminence of Panini and his commentator, Patanjali and the like were, not only academicians, but were also inspired seers of deep experiences and so were the authors of the six systems of philosophy.

Dayananda, through his commentary, added one more category to the alteady established categories of Vedic interpretation. To Dayananda, the Vedas constitute the living force, both mundane and spiritual. His is the dynamic and realistic philosophy of life. Compatible with this concept, he gets inspiration form the Vedas for all the disciplines of life. To him. life is real and purposeful and the prosperity in mundane life is a step for advancement towards the attainment of spiritual life.

There has been a great contribution of the people of ritualistic period in that they preserved the Vedic texts with care, but on the contrary the greatest disservice they did, was that they observed the natural meanings of the Vedic texts. The mantras were held in high esteem by them but the real meanings were lost to them and, therefore, for the last so many centuries, the Vedas ceased to have any dynamic impact on their life of an individual or on society. Thanks to the insight and inspiration at the close of the nineteenth century, followed by the spiritual experiences of another savant of the present century, shri Aurobindo, there has been a complete metamorphosis of

www.thearyasamaj.org

R.N. DEL BIL/2007/22120
DL (C)-14/1181/2011-2013

Date of Posting 12 & 13, at S.R.T. Nagar, Post Office, ND-55
Date of Publication 8-12-2013

ओ३म्

our thinking and evaluation of the Vedic tests. The greatest contribution of these two great sons of the soil has been the emancipation of the vedic interpretations from the tragic hands of the ritualistic scholiasts of the medieval period.

Maxmuller and other scholars of the west labored hard on the Vedic texts, not only as pure academicians, but they were also sure that could show to the Indian people how meaningless and debasing the concept of their own Vedic scholiasts was, so that their future generation more enlightened on account of the advanced science and philosophy, would refuse to accept the Vedas and Vedic philosophy and theology as their solace.

Prof. Maxmuller had the audacity to write to his wife in 1886- "I hope, I shall finish that work (translating the Rigveda). It (Veda) is the root of their religion and to show them what the roots is, I feel sure, is the only way of uprooting all that has sprung up during last three thousand years."

And on 16th December, 1868 he wrote to the Duke of Orgoil, the then Secretary of State for India –

"The ancient religion of India is doomed, Now if Charistianity does not step in, whose fault will it be?"

About the same time Mr. Pussey, a friend of Maxmuller wrote to him –

"Our work will form a new era in the efforts for the conversion of India to Christianity."

His evangelical ardour, prejudiced bent of mind and the ulterior motive that prompted him to write about the Vedas are clearly visible in the following excerps from his writings –

1. "Large numbers of Vedic hymns are childish in the extreme, tedious, low and common place." (Chips from a German Workshop)

And in letter to his son he wrote –

"would you say that any one sacred book is superior to all others in the world?.......I say- the New Testament. After that I should place the Koran, which in its moral teachings, hardly more than a later edition of the New Testament. Then would follow... the Old Testament, the Buddhist Trepitaka....The Veda and the Avesta."

Weber, another supposedly top-notch western indologist did his best to prove that Krishna was the corrupt form of the word Christ and that Gita and Mahabharata were inspired by Christianity. (History of Sanskrit Literature, 1914th, page 184)

Shri Aurobindo declared : "If certain hymns of the Vedas seem to us incoherent, it is because we do not understand them. Once the clue is found, we discover that they are perfect wholes as admirable in the structure of their thoughts as in their language and their rhythems." (Aurobindo, Vol. X, p. 16) And the clue has been provided by yaska, followed by Dayananda.

Being in a derivative and fluid language, the Veda is capable of multiple interpretation. Thus a term like गो may mean cow or earth, or speech and soon. Interspace has been given sixteen synonyems in Nighantu including words like अप: (which may also mean water; पृथवी also meaning earth and समुद्र (Which may also mean sea). The word पर्वत means mountain, but also cloud. The Veda contains terms nearest to their etymology, and in that sense, the word like rkr means father and also son. Multiplicity of interpretations is also due to the universality of concepts.

Then, we have another type of multiplicity which arises out of the analogies or parallelisms. This gives birth to the well-known 'adhibhuta' (अधिभूत), 'adhideva' (अधिदेव), and 'adhyatma' (अध्यात्म) concept. One and the same text can, therefore, be interpreted in a parallel way in all the three realims- physic- chemical- biological and psychological. Dayananda's interpretation of the hymns is governed by the idea that the Vedas are a plenary revelation of religious, ethical and scientific truths. By a proper understanding of the sense of the Vedas, we could arrive at all the scientific truths which have been discovered by modern research.

"GAYATRI MANTRA"

The most powerful hymn in the world

Dr. Howard Steingeril, an American scientist, collected Mantras, Hymns and invocations from all over the world and tested their strength in his physiologh laboratory...

Hindus' Gayatri Mantra produced 110,000 sound waves per second.

This was the highest and was found to be the most powerful hymn in the world.Through the combination of sound or sound waves of a particular frequency, this Mantra is claimed to be capable of developing specific spritual potentialities. The Hamburg university initiated research into the efficacy of the Gayatri Mantra both on the mental and physical plan of CREATION...

The GAYATRI MANTRA is broadcasted daily for 15 minutes from 7 P.M. onwards over Radio Paramaribo, Surinam, South America for the past two years, and in Amsterdam, Holland for the last six months.

"Om Bhoor Bhuwah Swah, Tat Savitur Varenyam,
Bhargo Devasya Sheemahi, Dhiyo Yo Nah Pra-chodayaat!"

"It's meaning:

God is dear to me like my own breath, He is the dispeller of my pains, and giver of happiness.

I meditate on the supremely adorable Light of the Divine Creator, that it may inspire my thought and understanding."

Printed and published by **Sh. S.C. Mehta** Secretary on behalf of Arya Samaj, Rajinder Nagar and printed at Gurmat Printing Press, 1337, Sangatrashan, Pahar Ganj, New Delhi-55 Ph. : 23561625 and published at Arya Samaj, Rajinder Nagar, New Delhi-110060. ***Editor :*** **Dr. Kailash Chandra Shastri**